IOSR Journal of Economics and Finance (IOSR-JEF)
e-ISSN: 2321-5933, p-ISSN: 2321-5925.Volume 6, Issue 1. Ver. I (Jan.-Feb. 2015), PP 102-103
www.iosrjournals.org

भारत मौद्रिक नीति

डॉ. यदुराज सिंह यादव
अध्यक्ष :– व्यावहारिक व्यावसयिक अर्थशास्त्र विभाग
किशोरी रमण महाविद्यालय मथुरा

आशय :– आधुनिक युग में मुद्रा तथा साख का महत्व बहुत अधिक बढ़ गया है किन्तु मुद्रा तथा साख मुक्त रूप में घटने या बढ़ने नहीं दिया जा सकता। इनका देश की आवश्यकता के अनुसार नियमन करना आवश्यक होता है अतः देश में मुद्रा तथा साख की पूर्ति को एक निर्धारित स्तर तक कार्य रखने के लिये जो नीति अपनायी जा सकती है उसे मौद्रिक नीति कहा जाता है। वास्तव में उन सब क्रियाओं को जो मुद्रा प्रणाली को प्रभावित करती है मौद्रिक नीति के अन्तर्गत सम्मिलित किया जाता है।

परिभाषाऐं– पॉल इंजिग Paul Einzing "मौद्रिक नीति के अन्तर्गत उन सभी मौद्रिक निर्णयों और उपायों को सम्मिलित किया जाता है जिनका उद्देश्य प्रणाली को प्रभावित करना हो"

केन्टKent –"मौद्रिक नीति का आशय एक निश्चित उद्देश्य की पूर्ति के लिये चयन का विस्तार और संकुचन करने की व्यवस्था से है"

मौद्रिक नीति की आवश्यकता Necessity of Monetary Policy

द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद से विश्व की आर्थिक नीतियों तथा परिस्थितियों में अनेक परिवर्तन हुए जिनके कारण मौद्रिक नीति की उपयोगिता निरन्तर बढ़ती जा रही है परन्तु उसकी सफलता के मार्ग में अनेक बाधाऐं भी खड़ी हो गयी है जो निम्नलिखित है।

(1) बेराजगारी में वृद्धि Increase in Unemployment

प्रथम विश्व युद्ध के बाद अधिकांश देशों में बेराजगारी बढ़नी आरम्भ हो गयी थी कुछ देशों में तो स्थिति बहुत गम्भीर हो गई थी कि रोजगार केवल काल्पनिक रह गया था। हाँ द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद अवश्य स्थिति परिवर्तित हुई परन्तु यह समस्या आज भी विकसित व विकासशील दोनों ही देशों में बनी हुई है।

(2) राष्ट्रीय आय में वृद्धि **Increase in National Income** –

उत्पादन की नयी विधियों का प्रयोग करने से प्रायरू सभी देशों की राष्ट्रीय आय बढ़ी है इस वृद्धि का प्रभाव लोगों के जीवन स्तर पर पड़ा है लोगों के रहन सहन, उपभोग के स्तर, बचत करनेकी शक्ति तथा विनियोग करने की प्रवृति में व्यापक वृद्धि हुई है। इन सभी से देश का मौद्रिक वातावरण बना है।

(3) मूल्यों में वृद्धि Rise in Prices

द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद प्रायरू सभी देशों में मूल्य वृद्धि का क्रम प्रारम्भ हो गया, प्रथम विश्वयुद्ध के बाद कुछ वर्षों तक आर्थिक मन्दी का दौर चला जिसे नियन्त्रित करने में अत्यधिक कठिनाई हुई । किन्तु वर्तमान स्थिति में मूल्यों के बढ़ने अर्थात् मुद्राओं के मूल्य गिरने की प्रवृति बहुत प्रबल है। विकसित व विकासशील देशों में मुद्रा स्फीति अधिक बढ़ी है अतः मुद्रा अधिकारियों के लिये मुद्रा मूल्यों में स्थिरता बनाये रखने के लिये मौद्रिक नितियों पर विचार करना पड़ता है।

(4) व्यापार में वृद्धि तथा व्यापार फेफेश का प्रतिकूल रहना –Increase intrade Balance of Trade

गत वर्षो में आर्थिक स्थितियों में महत्वपूर्ण परिवर्तन हुए है अन्तर्राष्ट्रीय संस्थाओं तथा क्षेत्रीय व्यापार संगठनों के सहयोग से एक तो विश्व के व्यापार में बहुत अधिक वृद्धि हुई है जिससे अधिकांश देशों के भुगतान सन्तुलन निरन्तर प्रतिकूल रहने की प्रवृति है यह भी मुद्रा अधिकारियों के निये चिन्ता का विषय है।

(5) पूँजी की माँग बहुत बढ़ाना –Increase in Demand of Capital

युद्धोन्तरकोलीन विश्व में अल्प तथा दीर्घकालीन पूँजी की माँग भी बढ़ गई है यद्यपि सभी देशों की राष्ट्रीय आय में वृद्धि हुई है और कुछ देशो में पूँजी निर्माण की गति भी बढ़ी है किन्तु विकासशील देशों में पूंजी की मांग इतनी अधिक बढ़ गई है कि उसे पूरा कर पाना कठिन है।

मुद्रा नीति के उद्देश्य :– सामान्य रूप से मुद्रा नीति के निम्न उद्देश्य होते है

(1) रोजगार की स्थाई एवं उच्च स्तरीय स्थिति बनाये रखना ।
(2) मूल्यों में स्थायित्व बनाये रखना ।
(3) भुगतान सन्तुलन की सन्तोषजनक स्थिति बनाये रखना
(4) आर्थिक विकास उपर्युक्त चार उद्देश्यों के अतिरिक्त मौद्रिक नीति के निम्न दो उद्देश्य और है।
(5) आय स्थिरता
(6) तटस्थ मुद्रा या प्रभाव हीन मुद्रा

भुगतान सन्तुलन को अनुकूल बनाये रखने हेतु मौद्रिक नीति के विभिन्न प्रयोग

भुगतान सन्तुलन को अनुकूल बनाये रखने के लिए मौद्रिक नीति का अनेक रीतियों में प्रयोग किया जा सकता हैं।

(1) विनिमय दर नीचे स्तर पर रखना –Keeping Rate of Exchange at a low level अपनी मुद्रा की विनिमय दर नीची बनाए रखकर निर्यातों को प्रोत्साहित तथा आयातों को निरूत्साहित किया जा सकता है। इस रीति का प्रयोग गत कुछ वर्षों में बहुत बढ़ गया है।

भुगतान सन्तुलन और विनिमय दर प्रायरू एक दूसरे पर निर्भर करते है। यदि भुगतान सन्तुलन प्रतिकूल हो जाता है तो विनिमय दर गिरने लग जाती है और विनिमय दर गिरने पर निर्यातों में वृद्धि होने लगती है भुगतान सन्तुलन उचित स्तर पर आ जाता है। अतः केन्द्रीय बैंक इस बात का प्रयत्न करता है कि निर्यातों तथा आयातों में उचित सन्तुलन बना रहें ।

(2) ब्याज की दर में वृद्धि करना –Raising the rate of interest

भुगतान सन्तुलन को अनुकूल बनाये रखने के लिए कभी–कभी ऋण– पूँजी पर ब्याज की दर बढ़ा दी जाती है। इसका प्रभाव यह होता है कि विदेशों में पूँजी आयात होकर देशी बैंको में जमा होने लगती है। पूँजी आयात होने से देश का भुगतान सन्तुलन अनुकूल हो जाता है और विनिमय दर भी सामान्य स्तर पर बनी रहती है।

ब्याज की दर ऊँची हो जाने से पूँजी मँहगी हो जाती है। अतरू देश में ही पूंजीगत माल (जो उधम् लेकर विदेशों में खरीदा जाता है) की माँग कम हो जाती है । अतः आयात कम हो जाने से व्यापार सन्तुलन पक्ष में हो जाता है और विनिमय की दर भी यथोचित स्तर पर बनी रहती है।

(3) विनिमय नियन्त्रण लगाना Imposing Exchange Control

अनेक बार विनिमय नियन्त्रण के माध्यम से भी भुगतान सन्तुलन तथा विनिमय दर को अनुकूल रखा जाता है। यह रीति प्रायरू अत्यधिक कठिनाई की स्थिति में अपनाई जाती हैं युद्ध अथवा विदेशी विनिमयसंकट के समय विनिमय नियन्त्रण लगाना एक परंम्परागत नीति बन गई है। वर्तमान में प्रायः सभी विकासशील देशों में विनिमय नियन्त्रण लगाये गये हैं।

(4) बैंकिग नीति –Banking Policy

भुगतान उचित करने के लिए बैंको के माध्यम में धन प्रेषण अथवा भुगतान व्यवस्था को सरल करने की नीति अपनाई जाती है जिसके परिणामस्वरूप विदेशी लेन देन अधिक होने लगता है ब्याज की दर का सहारा लेकर अन्तत्वोगत्वा भुगतान सन्तुलन को अनुकूल करने में सफलता प्राप्त की जा सकती है।

एक विकासशील अर्थव्यवस्था में मौद्रिक नीतिMonetary Policy in a Development Economy मौद्रिक नीति के अन्तर्गत जिन चार उद्देश्यों की चर्चा की गई है वह मूल रूप से सभी देशों के लिये उपयोगी है केवल प्राथमिकता का अन्तर है उदाहरण के लिए विकासशील देशों में जहाँ अधिक गरीबी है प्रति व्यक्ति आय कम है पूँजी निर्माण का अभाव है आर्थिक विकास की गति शिथिल है और जनता में बेरोजगारी है आर्थिक विकास तथा रोजगार के उच्च स्तर को प्राथमिकता देनी पड़ेगी। इसके लिए उदार मौद्रिक नीति अपनाना आवश्यक है ताकि किसी भी विकास शील व्यवसाय को पूँजी की कमी का सामना न करना पड़े। इस नीति के स्वभाविक रूप में प्राकृतिक साधनों के विकास के लिए पर्याप्त अवसर मिलेगें उत्पादन में वृद्धि होगी और अधिक से अधिक व्यक्तियों को रोजगार भी मिल सकेगा। इस प्रक्रिया में सम्भव है देश में कुछ मुद्रा एवं साख का प्रसार हो जाये तथा मूल्य स्तर में भी सामान्य वृद्धि हो। वास्तव में विकासशील देशों के सामने मूल समस्या गरीबी दूर करने तथा सबके लिए काम देने की है अतरू सामान्य मुद्रा स्फीति या मूल्य वृद्धि से भयभीत होने का कारण नहीं है।

जहाँ तक विकसित राष्ट्रों की मुद्रा नीति का प्रश्न है। उसमें रोजगार पहले ही उच्च स्तर पर होता है तथा आर्थिक विकास की गति तीव्र नही होती । इस स्थिति में रोजगार को सामान्य स्तर पर लाना होता है ताकि मूल्य एवं मजदूरी के स्तर भी सामान्य हो जाऐ । वस्तुओं के मूल्यों में कभी–कभी बहुत कमी आने का भय भी बना रहता है। अतः मुद्रा एवं साख की मात्रा को सीमित करना होता है तथा जनता के पास से अतिरिक्त मुद्रा वापिस खीचना आवश्यक होता है। आधुनिक अर्थशास्त्रीयों की तो यहां तक मान्यता है कि इन देशों में ब्याज की दर में सामान्य वृद्धि में भी अतिरिक्त पूँजी का निर्माण होता है उस पूँजी को विकासशील देशों में लगा देना चाहिए ताकि विकासशील देशों की स्फीति विकसित देशों में न फैले। विकसित देशों के लिए मुद्रा की विनिमय दर को बनाये रखने की कोई समस्या नहीं होती न भुगतान सन्तुलन की प्रतिकूलता ही उन्हें पीड़ित करती है। वास्तव में इन देशों के भुगतान अधिक अनुकूल होते है और अधिक उत्पादन होने के कारण माल बेचने की समस्या होती है। अतः इन देशों में विदेशियों को कम ब्याज पर ऋण देने की या उधार माल देने की व्यवस्था की जानी चाहिए। विकासशील देशो में भुगतान सन्तुलन प्रतिकूल होने का भय सदैव बना रहता है और पूँजी निर्माण को प्रोत्साहित करना भी आवश्यक होता है अतरू ब्याज की दरें ऊँची रखनी पड़ती है किन्तु ब्याज की दरें इतनी ऊँची भी नहीं होनी चाहिए कि उत्पादन की लागत में अत्यधिक वृद्धि हो जाए।

अतः विकासशील देशों में रोजगार के साधन तथा आर्थिक विकास के कार्यक्रमों को प्रोत्साहित करने के लिए उदार मौद्रिक नीति (स्पइमतंस डवदमजंतल च्वसपबमल) अपनाया जाना चाहिए परन्तु मूल्य स्तर को नियन्त्रित रखने की दिशा में भी सामान्य प्रत्यत्न जारी रखे जाने चाहिए।